जैन पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

सभी तीर्थक्षेत्र और जिन मंदिर जैन संस्कृति के आधार स्तम्भ हैं; जैन समाज की श्रद्धा के केन्द्र बिन्दु हैं, सामाजिक एकता और अखण्डता के सशक्त आधार हैं।

ह्न शाश्वत तीर्थ सम्मेद शिखर, पृष्ठ-९

वर्ष : 28, अंक : 11 **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल आजीवन शुल्क : 251 रुपये

सितम्बर (प्रथम) 2005 **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

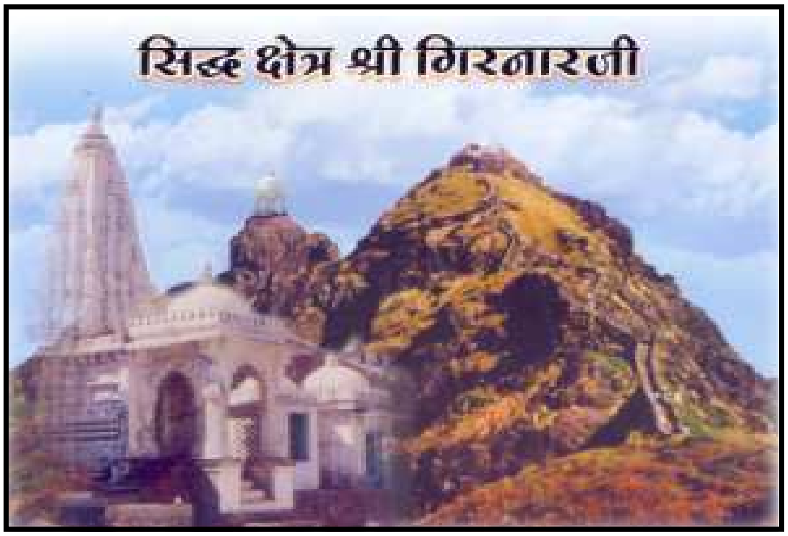

महासमिति के नवनिर्वाचित राष्ट्रीय अध्यक्ष विवेक काला को शुभकामनायें !

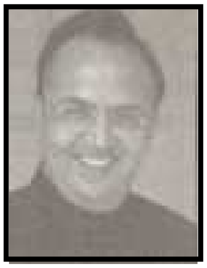

दिनांक 7 अगस्त, 2005 को अतिशय क्षेत्र पदमपुरा, जयपुर में दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष हेतु सम्पन्न हुये चुनाव में जयपुर के प्रसिद्ध रत्नव्यवसायी, समाजसेवी श्री विवेक काला को सर्वसम्मति से दिगम्बर जैन महासमिति का अध्यक्ष चुना गया। आप अनेक धार्मिक, सामाजिक, व्यावसायिक संस्थाओं के पदाधिकारी हैं।

आपके द्वारा दिगम्बर जैन समाज को नई दिशा मिले इसी भावना के साथ जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से आपको हार्दिक शुभकामनायें !

जयपुर शिविर 6 अक्टूबर से....

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर द्वारा प्रतिवर्ष दशहरे के अवसर पर लगनेवाला शिविर इस वर्ष **गुरुवार, दिनांक 6 अक्टूबर से शुक्रवार, 15 अक्टूबर 2005 तक** लगना निश्चित हुआ है।

समस्त साधर्मी भाई-बहिन तिथि का ध्यान रखते हुये शिक्षण-शिविर में अवश्य पधारें। विस्तृत कार्यक्रम आगामी अंक में प्रकाशित किया जायेगा।

गिरनार रक्षार्थ देशव्यापी आन्दोलन

सिद्धक्षेत्र गिरनारजी पर विगत एक वर्ष से चले आ रहे उपसर्ग तथा कुछ असामाजिक तत्त्वों द्वारा किये गये अवैध निर्माण को लेकर निर्मित श्री गिरनारजी तीर्थ राष्ट्र-स्तरीय एक्शन कमेटी के अन्तर्गत जैन समाज ने देश व्यापी आन्दोलन शुरु कर दिया है। इस आन्दोलन की प्रथम कड़ी के रूप में दिनांक 14 अगस्त को सामूहिक पूजन का आयोजन कर क्षेत्र की रक्षा के लिये संकल्प पत्र भरे गये।

आगामी कड़ी के रूप में एक्शन कमेटी द्वारा दिनांक 11 सितम्बर, 2005 को गिरनार तीर्थ की रक्षार्थ सम्पूर्ण राष्ट्र में सामूहिक पूजन एवं एक दिन का उपवास रखने का आह्वान किया गया है।

एक्शन कमेटी के अध्यक्ष श्री एन.के.सेठी ने आगामी विस्तृत कार्ययोजना पर प्रकाश डाला। साथ ही कमेटी के सदस्य एवं विद्वत परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल ने सभी जैनबन्धुओं से इस आयोजन में भाग लेकर गिरनार तीर्थ की रक्षा के लिये अपना सहयोग प्रदान करने की प्रेरणा दी। आगामी योजनायें एवं जानकारी समय-समय पर प्रकाशित की जायेंगी।

शिक्षा मंत्री द्वारा सम्मानित

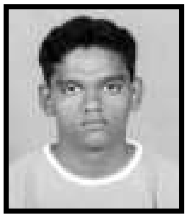

नितिन जैन

1. श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के मेधावी छात्र नितिनकुमार जैन सेमारी को माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर द्वारा आयोजित वरिष्ठ उपाध्याय (बारहवीं) परीक्षा में 83 प्रतिशत अंक अर्जितकर सम्पूर्ण राजस्थान की वरीयतासूची में प्रथम स्थान प्राप्तकरने पर दिनांक 19 अगस्त को संस्कृत दिवस एवं रक्षा बन्धन के शुभ अवसर पर सूचना केन्द्र-जयपुर में आयोजित समारोह में गणमान्य शिक्षामंत्री श्री घनश्यामजी तिवाड़ी और वासुदेव देवनानी की उपस्थिति में राज्य स्तरीय प्रमाण-पत्र एवं नकद राशि प्रदान कर सम्मानित किया गया।

2. कुमारी नेहा दिलीप चौधरी औरंगाबाद ने बोर्ड की दसवीं परीक्षा में 94.13 प्रतिशत अंक प्राप्त कर औरंगाबाद विभाग में चौथा मैरिट स्थान प्राप्त किया।

जैनपथप्रदर्शक परिवार उक्त दोनों मेधावी विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता है।

सम्पादकीय –

नींव का पत्थर

9 ह्न रतनचन्द भारिल्ल

बहू हो तो ऐसी

एक ही व्यक्ति के दो नाम रखने की बहुत पुरानी परम्परा है। पहले सुना करते थे कि अमुक व्यक्ति का राशि का नाम सन्मति है और चालू नाम सन्तु है। बाद में कहने लगे कि स्कूल का नाम महावीर है और घर का नाम वीरू है। अनेक तीर्थंकरों के नाम भी तो एक से अधिक हैं। इसी परम्परागत रीति-रिवाज के अनुसार ज्योत्स्ना को घर में प्यार से ज्योति कहते जरूर थे; परन्तु वह दीपक की ज्योति की भाँति कलह का काजल और अशान्ति की आग उगलने वाली ज्योति नहीं, बल्कि वह तो चाँद की परछाई ज्योत्स्ना की ज्योति है, जो सुखद-शीतल और प्रशम प्रकाश प्रदान करती है।

माँ के संस्कार ज्योति के रोम-रोम में समाये हुए हैं। अपने परिवार के साथ सु-समायोजित (एडजेस्टमेंट) करके सुख-शान्ति और सम्मान के साथ कैसे रहा जाता है ? ह्न यदि यह महामंत्र किसी को सीखना हो तो उसे ज्योत्स्ना जैसी पारिवारिक महिला के चरित्र से सीखना होगा।

ज्योत्स्ना ने ससुराल में आकर अपनी ज्योत्स्ना जैसी शीतलता और संताप रहित आलोक से सबको शान्त एवं आलोकित कर अपने ज्योत्स्ना नाम को सार्थक कर दिखाया। उसने 'नाम बड़े और दर्शन छोटे' कहावत को झुठला दिया। इसके बदले लोग यह कहने लगे कि ह्न ''वाह ! ज्योत्स्ना के बारे में जैसा सुना था, उसे वैसा ही पाया। बहू क्या है ? यह तो यथानाम तथा गुण सम्पन्न कोई देवी है। बहू हो तो ऐसी हो !

मोहल्ले भर में सबसे तेज-तर्रार मानी जाने वाली सास भी जिसकी प्रशंसा करते-करते थकती नहीं है, जिसका गुणगान करते-करते श्वसुर का गला भर आता है। उस बहू की जब वे अड़ौसी-पड़ौसियों से प्रशंसा सुनते हैं तो वे मुस्कुराते हुए बड़े गौरव से कहते हैं ह्न 'आखिर बहू किसकी है ?' पड़ौसी भी कहते हैं ह्न 'हाँ भाई ! तुम बहुत भाग्यशाली हो, जो तुम्हें ज्योत्स्ना जैसी बहू मिल गई। हमें तो यह चमत्कार-सा लगता है कि शादी के वर्षों बाद भी सास-श्वसुर द्वारा बहू की प्रशंसा के गीत गाये जा रहे हैं। अधिकांश तो सासों को बहुओं के दुखोने रोते ही देखा जाता है। जहाँ दो सासें मिली नहीं कि बहुओं के कारनामों के चर्चे छिड़ जाते हैं और जहाँ दो बहुएँ मिली नहीं कि सासों के अत्याचारों की कहानियाँ सुनने को मिलती हैं।

यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि **जिसके जिन गुणों की प्रशंसा की जाती है, उसके उन गुणों का विकास तीव्र गति से होने लगता है,** ज्योत्स्ना के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। उसमें कुछ विशेषतायें तो माँ से प्रशंसा पाकर बचपन में ही विकसित हो चुकीं थी, बहुत कुछ बाद में ज्यों-ज्यों उसकी प्रशंसा हुई त्यों-त्यों उसके गुणों में विकास होता गया और अब वह न केवल परिवार में, मुहल्ले में बल्कि पूरे समाज में, नगर में और देश-विदेश में भी प्रशंसा की पात्र बन गई।

गणतंत्र और ज्योत्स्ना की जोड़ी कद-काठी, हेल्थ-हाईट और रंग-रूप में पूरे परिवार से बेजोड़ है। ऐसे जोड़े विरले ही होते हैं। वे जहाँ कहीं भी खड़े होते, लोगों की निगाहें बरबस उन पर अटक जाती हैं। उनका बाह्य व्यक्तित्व जैसा आकर्षक है, अन्तरंग में भी वे वैसे ही सुशील, सज्जन और निश्छल हैं। धार्मिक आचरण के प्रति भी उनका अच्छा आकर्षण है।

गणतंत्र की प्रकृति बहुत कम बोलने की है, उसके चेहरे पर ऐसा भोलापन झलकता है कि उससे यह अनुमान नहीं लगता कि इसका स्वभाव क्रोधी भी है। जबकि ज्योत्स्ना का जीवनसाथी बनने के पहले वह बहुत तेज था। उसे बात-बात पर क्रोध आ जाता था। ज्योत्स्ना के मधुर व्यवहार और शान्त स्वभाव का उस पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह स्वत: ही बहुत कुछ शान्त हो गया। अब उसे बहुत कम क्रोध आता है; परन्तु जब आता है तो वह अति उग्र हो जाता है।

यद्यपि उसमें प्रतिभा और बुद्धि अपने साथियों की तुलना में किसी से कम नहीं है; परन्तु वह उसका उपयोग पारिवारिक, सामाजिक और राजनैतिक चालबाजियों में नहीं करता। वह न किसी की खुशामद करता है और न उसे खुशामदी लोग पसंद हैं। वह स्पष्टवादी है; परन्तु बिना प्रयोजन अपनी स्पष्टवादिता का उपयोग भी नहीं करता। इसकारण सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र में उसकी विशेष पकड़ नहीं है, फिर भी वह अपने आप में खुश है, संतुष्ट है।

ज्योत्स्ना के जीवन पर उसकी माँ की छाप बहुत अधिक है, इसकारण धार्मिक क्षेत्र में वह अधिक सक्रिय रहती है। अपनी मीठी बोली, मधुरव्यवहार और धर्मात्माओं के प्रति निस्वार्थ प्रेम होने से वह धार्मिक क्षेत्र में जनप्रिय भी हो गई।

गणतंत्र अपने रिजर्व नेचर के कारण भले ही ज्योत्स्ना के बराबर जनप्रिय नहीं हो पाया; परन्तु उसमें भी कुछ ऐसी विशेषतायें हैं, जिनका लोग बराबर लोहा मानते हैं। यदि उसके क्रोधी स्वभाव और रिजर्व नेचर को गौण करके देखें तो वह भी बहुत अच्छा इन्सान है। ज्योत्स्ना के सम्पर्क से अब उसका क्रोध तो कम हुआ ही है, तत्त्वरुचि हो जाने से अब वह धार्मिक और नैतिक विकास के कामों में भी सक्रिय हो रहा है।

एक पड़ोसिन अम्मा को जिज्ञासा जगी कि देखें तो सही ह्न ज्योत्स्ना ने सासू माँ पर ऐसा क्या जादू कर दिया है कि इतनी तेज-तर्रार सास पानी-पानी हो गई ? आखिर ज्वालाबाई शान्तिबाई कैसे बन गई ? और दस वर्ष से बहू के साथ उसकी एक ही चौके में कैसे निभ रही है ?'' यह साधारण बात नहीं है। यद्यपि पतियों को पलट लेना बहुत कठिन नहीं है; किन्तु क्रोधी पति को पलट लेना आसान भी नहीं है। साथ ही सास-श्वसुर को काबू में करना तो लोहे के चने चबाने जैसा है। इसलिए ज्योत्स्ना तारीफ के काबिल तो है ही।

एक दिन उस पड़ोसिन अम्मा ने प्यार से ज्योत्स्ना के सिर पर हाथ फेरते हुए उससे पूछा ह्न ''बेटी ! यदि बुरा न माने तो एक बात पूछूँ ?''

ज्योत्स्ना ने प्रसन्नता प्रगट करते हुए कहा ह्न ''अम्मा ! कैसी बातें करती हो ? इसमें बुरा मानने की क्या बात हैं। तुम ऐसी कौन-सी बुरी बात कहने जा रही हो, जिसका बुरा माना जाय ? तुम कोई ज्ञान की बात पूछ कर अपनी जिज्ञासा ही तो शान्त कर रही हो। यदि बुरी लगनेवाली बात कहोगी तो उसका भी मेरे पास उपाय है।'

पड़ोसिन अम्मा ने पूछा ह्न ''वह कौन-सा उपाय है जिससे बुरी बात का भी तू बुरा नहीं मानती ?'' ज्योत्स्ना ने कहा ह्न ''अरे ! अम्मा ! जो भली बात होती है, मैं उसे ही अपनाती हूँ, जो बात मुझे ठीक नहीं लगती, मैं उस पर ध्यान नहीं देती। मैं सोच लेती हूँ कि जो बात कान में पड़ते ही दिमाग खराब करती है, उसे अपनाकर क्या करूँगी ? और अपने दो कान किसलिए हैं ? इसीलिए न कि बुरी बात को इस कान से सुनो और उस कान से निकाल दो। उसे गले से निगलो ही मत। निगलने से ही तो पेट में दर्द की संभावना बनती है। इसलिए मैं तो हमेशा यही करती हूँ कि बुरी बात इस कान से सुनी और उस कान से निकाल दी। इसी कारण कुछ भी/कैसी भी बातें सुनने से मेरे पेट में दर्द नहीं होता।''

ज्योति ने आगे कहा ह्न ''जब मैं ऐसा करती हूँ तो दूसरी बार बुरी बात कहने की कोई सोचता ही नहीं है और हाँ, मैं ऐसा करके उससे अपना बोलचाल एवं व्यवहार पूर्ववत् ही चालू रखती हूँ। अपने व्यवहार में फर्क नहीं लाती।''

इसतरह ज्योत्स्ना ने अपनी नीति बड़े प्यार से पड़ोसिन अम्मा को समझायी।

अम्मा ने कहा ह्न ''यह तो अति उत्तम है। यह प्रयोग मैं भी करूँगी, परन्तु मैं तो यह सोच-सोच कर हैरान थी कि जिसका पति ऐसा क्रोधी हो जो बात-बात पर इतना आग-बबूला हो जाता हो कि जो कोई भी उसे छुए तो वह जल ही जायेगा। जिसकी सास इतनी तेज-तर्रार हो, वह बहू कितनी भी सुशील व

सज्जन क्यों न हो, कैसे सहती होगी इनके ऐसे अत्याचार ? सहनशीलता की भी तो कोई हद होती है। मैं यह सब सोचकर कौतूहलवश यह जानने को यहाँ आई थी; पर यहाँ आकर देखा तो यहाँ तो सचमुच सब उलट-पलट ही हो गया। गजब हो गया ! बहू ! तूने ऐसा क्या जादू कर दिया ? इसकी विशेष जानकारी तो तेरे निकट सम्पर्क में रहने से ही मिल सकेगी; परन्तु यदि यह सफल नुस्खा मेरे हाथ लग जाय तो मैं तो इसे हर कीमत पर सारी दुनियाँ में फैला देना चाहती हूँ; क्योंकि दुनिया सास-बहुओं की कसमकस से परेशान है। फिर 'सास भी कभी बहू थी' जैसे टी. वी. सीरियलों की कोई जरुरत ही नहीं रहेगी। घर-घर की रोने-धोने की कहानियाँ भी विश्व के नक्शे से नदारद हो जायेंगी। इससे बढ़कर परोपकार का, पुण्य का अन्य कोई काम नहीं हो सकता। बहुएँ तो बेचारी दु:खी हैं ही, सासें भी कम परेशान नहीं हैं। मैं चाहती हूँ इसका कोई सरल-सा उपाय मिले। मुझे विश्वास है कि यह काम हम-तुम मिलकर कर सकते हैं। अत: तू मुझे वह महामंत्र बता, जिस महामंत्र से तूने अपनी सासू माँ का दिल जीता है, उसे ज्वालाबाई से शान्तिबाई बना दिया है और गणतंत्र जैसे ज्वालामुखी को हिमालय जैसा शीतल एवं गंगा जैसा कल-कल नाद करनेवाला मधुरभाषी बना दिया है। उस महामंत्र को मैं सारे विश्व में फैला कर सबके मनस्ताप को शान्त करूँगी ह्न ऐसा मेरा दृढ़ संकल्प है। पैसे की मुझे परवाह नहीं है। इस काम के लिए मेरे पास पर्याप्त पैसा है; बल्कि मुझे तो पैसा खर्च करने की समस्या है कि कहाँ खर्च करूँ ?

वैसे पैसा माँगनेवालों की भी कमी नहीं है। आये दिन नवनिर्माणों के लिए चन्दा-चिठ्ठा माँगनेवाले लाईन लगा कर खड़े रहते हैं; परन्तु मैं अपनी न्याय-नीति की गाढ़ी कमाई को संसारी जीवों के मानसिक दु:खों को स्थाईरूप से दूर करने में ही लगाना चाहती हूँ। ज्योत्स्ना ! यह काम मात्र तेरे सहयोग से ही संभव है ह्न ऐसा मुझे विश्वास हो गया है।

जब से तू ब्याह कर हमारे पड़ोस में आई है, तभी से मैं बराबर देख रही हूँ कि तेरे शान्त स्वभाव और मधुर व्यवहार की शीतल धारा से गणतंत्र जैसा क्रोधी धीरे-धीरे शान्त हो रहा है और सासू माँ में तो आमूलचूल परिवर्तन हो ही गया है। यह काम किसी जादू से कम चमत्कारिक नहीं है।

वैसे मैं बहुत देर से प्रभावित होती हूँ, इसकारण बहुत कम लोगों की तारीफ करती हूँ। अधिकतर तो मुझे भी अभी तक इसी में मजा आता रहा कि ह्न **'दोनों पलीतों दे दो तैल, तुम नाचो हम देखें खेल।'** परन्तु एक दिन अनायास मैं एक सहेली के साथ तेरी माँ समताश्री के प्रवचन में पहुँच गई। संयोग से उस दिन रौद्र ध्यान की चर्चा चल रही थी। उन्होंने कहा ह्न 'सच्ची-झूठी चुगलखोरी करके परस्पर में दो व्यक्तियों को मेढों और मुर्गों की तरह लड़ा-भिड़ाकर उसमें आनन्द लेना रौद्रध्यान है, जिसका फल नरक है।' तभी से मैंने कसम खाली कि अब मैं आगे से तो ऐसा काम करूँगी ही नहीं, अबतक किए गये इस रौद्रध्यान के प्रायश्चित्त स्वरूप मैं कुछ ऐसा करूँगी, जिसके फल में सब जीव सुखी रह सकें। कोई परस्पर में कलह न करें, लड़ें-भिड़ें नहीं और दूसरों को लड़ाकर आनन्द न मानें।''

बहुत देर से मौन साधे ध्यान से पड़ोसिन की बात सुनते हुए मौनभंग करके ज्योत्स्ना ने पूछा ह्न ''अम्माजी यह पलीतोंवाली कहावत जो आपने कही, उसमें पलीतों का क्या अर्थ है और यह किस प्रयोजन से, कैसे प्रचलित हुई है।''

अम्मा ने कहा ह्न ''अरे बहू ! तू क्या जाने इन दन्द-फन्दों को ? यह तो **कलयुग का सबसे बड़ा पड़ोसी** धर्म है। यदि दो पड़ोसनें आपस में प्रेम से रहती हों या सास-बहुएँ प्रेम से रहती हों तो उनके प्रेम से रहने में कलहप्रिय व्यक्तियों को मजा नहीं आता। अत: वे इधर की गुप्त बातें उधर, उधर की गुप्त बातें इधर कहकर उन्हें आपस में लड़ा-भिड़ा देते हैं, जब वे जाँघें ठोककर लड़ने लगते हैं तो दाँतों में रूमाल दबा कर हँसते हैं और मजा लेते हैं। ऐसे लोगों के लिए यह कहावत चल पड़ी। इसका मूल स्रोत बुन्देलखण्डी लोकनृत्य है, जिसे गाँव की भाषा में राई कहते हैं। उस लोकनृत्य में प्रकाश के लिए मसालची के हाथों में जो मशालें होती हैं, उन्हें ही पलीता कहते हैं। उन पलीतों में तेल डालकर रोशनी करते हैं, नर्तक-नर्तकियों को होड़ लगाकर रातभर नचा-नचाकर मजा लेते हैं, भले वे नाचते-नाचते थककर चकनाचूर हो जाँय, बेहोश होकर गिर पड़ें, दर्शकों को इसकी कुछ भी परवाह नहीं होती। वे तो नशे में मस्त होकर स्वयं झूमते हैं और पैसों से प्रोत्साहित कर-करके उन्हें नचाते हैं।

इसीतरह कलहप्रिय पड़ोसी-पड़ोसिनें दूसरों को लड़ा-भिड़ाकर मजा लेते हैं। मैं उस गंदे वातावरण को आमूलचूल बदलना चाहती हूँ। मुझे इस काम में तेरे सहयोग की जरूरत है। यही समस्या मैंने एक जन्तर-मन्तर जानने वाले बाबा के पास रखी भी थी तो उसने मुझे पाँच हजार रुपये में तीन ताबीज दिए थे और तीन माह तक दोनों बाजुओं में बाँधने और गले में पहनने को कहा था; तीन माह की जगह छ: माह हो गये; पर उनसे अब तक तो कुछ हुआ नहीं।''

ज्योत्स्ना ने कहा ह्न ''अम्मा ! आप ऐसे-वैसे बाबाओं की बातों में न आया करो! ये सब बुद्धू बनाने की बातें हैं। ऐसे कोई यंत्र-मंत्र-तंत्र नहीं होते। अम्मा ! आप मेरी दादी की उम्र की तो होंगी ? आप अभी भी ऐसे चक्करों में पड़ जाती हो। खैर ! एक दिन आप मेरी माँ के प्रवचन में पुन: चलना। वे कुछ ऐसी ज्ञान की बातें बता देंगी, जिससे आपकी सब परेशानियाँ दूर हो जायेंगी और आपको जनहित करने और आत्मकल्याण करने की सही विधि मिल जायेगी।''

अम्मा ने स्वीकार किया ह्न ''बेटी ! तू ठीक कहती है, मैंने तेरी माँ का एक प्रवचन सुना था, उससे भी मुझे बहुत शान्ति मिली थी। मैं जरूर चलूँगी।''

माँ समताश्री के प्रवचन में आज ज्योत्स्ना की पड़ोसिन अम्मा भी आई और अग्रिम पंक्ति में बैठी, ताकि ध्यान से सुन सके। ज्योत्स्ना ने प्रवचन प्रारंभ होने के पहले ही माँ को उस पड़ौसिन अम्मा की समस्या से अवगत करा दिया था। अत: समताश्री ने क्रमबद्धपर्याय और सर्वज्ञता के द्वारा वस्तुस्वातंत्र्य के सिद्धान्त की सिद्धि से ये आर्त-रौद्र के परिणामों की दिशा स्वयं कैसे बदल जाती है तथा स्व-पर कल्याण कैसे संभव है ? यह विषय सरल भाषा में विस्तार से समझाने का निश्चय किया और बीच-बीच में अम्मा को संबोधते हुए उन्होंने कहा ह्न किसी को भी मानसिक दु:ख न हो, सभी सद्भाव से रहें। कोई किसी को लड़ाये-भिड़ाये नहीं। इसके लिए हमें भगवान की सर्वज्ञता के आधार पर क्रमबद्धपर्याय का स्वरूप समझना होगा। ''देखो अम्माजी ! मैं पहले किसी धर्म विशेष की बात न कहकर सर्वसम्मत बात की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहती हूँ। पहली बात तो यह है कि विश्व में ऐसा कोई धर्म नहीं है, जो किसी न किसी रूप में भगवान को नहीं मानता हो और दूसरी बात यह कि जो भगवान को मानता है, वह उसे सर्वज्ञ भी मानता ही है। तीसरी बात सर्व शक्तिवान भगवान सर्वज्ञ हमारे-तुम्हारे-सबके भविष्य को भी जानते ही हैं। चौथी बात ह्न वह सर्वज्ञ विश्व में जिस द्रव्य में जो होनेवाला है, उसे ही जानेंगे ! अनहोनी तो जानेंगे ही नहीं।

इन सब बातों से हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि जब जो होना है, वही होता है तो हम भला-बुरा करने के भाव करके व्यर्थ में पुण्य-पाप के चक्कर में क्यों पड़ें। जो सर्वज्ञ के जाने गये अनुसार होना है, उसमें हमारा क्या स्थान है ? बस हमें इतना जानना भर है। यदि न जानो तो यह भी मत जानो, होने वाले काम को आपके जानने की भी अपेक्षा नहीं है, वह तो अपने स्वकाल में अपनी तत्समय की योग्यता से होगा ही। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि आप सर्वज्ञ, सर्वदर्शी एवं पूर्ण वीतरागी भगवान के प्रति आस्थावान हैं, उन्हें अपना आराध्य देव मानते हैं तो आपको अज्ञानजनित पर के कर्तृत्व के भार से आज ही निर्भार हो जाना चाहिए। अन्यथा हम यह समझेंगे कि आप भगवान को ही नहीं मानते।

दिव्यध्वनि में आया है कि ह्न 'छह द्रव्यों के समूह का नाम विश्व है, द्रव्य को ही वस्तुत्व गुण के कारण वस्तु कहते हैं। यह सम्पूर्ण द्रव्य या वस्तुयें पूर्ण स्वतंत्र एवं स्वावलंबी हैं, यद्यपि इनके प्रतिसमय होनेवाले परिणमन में अन्य द्रव्यों का

(शेष पृष्ठ 8 पर ...)

धर्म के दशलक्षण

(कविवर मंगतराजजी कृत)

तर्ज : श्री सिद्धचक्र का पाठ करो गुण ....।

उत्तम शौच

है लोभ बड़ा इक पाप, देत सन्ताप,सहे दु:ख आप,
जो मन में धारे, घर बार छोड़ रण भूमि मरे अरू मारे।
जा बसे अनारज देश, धरे बहु भेष, धर्म का लेश,
न मन में लावे, जल डुबे वन गिरि भ्रमतैं जान गँवावे।।
आशा की गले में फाँसी, क्या हुआ भये वनवासी।
विष रहा काँचुली नाशी, मन रागरू भये उदासी।।
क्या गंग जमुन स्नान, तीर्थ जलपान, मैल की खान,
देह ज्यों धोवे, बिन किये तपस्या दोष दूर नहीं होवे।
पर द्रव्य की ममता त्याग, सहित वैराग, शौच में लाग,
स्व-पर हितकारी, दशलक्षण धर्म विचार जीव संसारी।।

उत्तम सत्य

नित बोला वचन संभार, झूठ को टार, निंद परिहार,
कठोर वच माला, जो देखो जानो वही कहो तत्काला।
जिस सच में हो जियघात, उठे उत्पात, झूठ सम भ्रात,
जान विसरावो, नहीं राग द्वेष से बात से बात मिलावो।।
वसु राजा नरक सिधारा, पर्वत का वचन सुधारा।
नारद गया स्वर्ग मंझारा, है बाल विथिल संसारा।।
पशु पक्षी वचन विहीन, कर्म आधीन, मनुष्य परवीन,
जन्म का लाहा, तिन लिया, जिन्होंने जग में सत्य निवाहा।।
हो जगत विषै परतीति, करें सब प्रीति, सत्य की रीति,
गहो नर नारी, दशलक्षण धर्म विचार जीव संसारी।।

उत्तम संयम

मन मृग का तन वनवास, इन्द्रियों जास, मृगी गण पास,
केलि नित करते, तेरे धर्मखेत को फिरे रात-दिन चरते।
रे! जीव रूप किस्सान, तू चादर तान, नींद अज्ञान,
पड़ा क्यों सोवे, जब उजड़ गया सब खेत बैठ कर रोवे।।
मन इन्द्रिय विषयन पागे, ते कभी न हित सों लागे।
भामण्डल वत् अनुरागे, उत्पात में प्राण वे त्यागे।।
ले मन इन्द्रिय को जीत, जगत भयभीत, जो संयम प्रीति,
करो ग्रह शिक्षा, त्रस थावर रक्षा, करो धारके दीक्षा।
मुनि मन इन्द्रिय निरोध, जो संयम शोध, धरें चित बोध,
प्रमाद विसारी, दशलक्षण धर्म विचार जीव संसारी।।

उत्तम तप

अनशन अवमौदर्य करो, परिसंख्यान वरो, सुरस परिहरो,
कसो निजकाया, सन्यास सुधारो, षट् तप बाल बताया।
प्रायश्चित्त, स्वाध्याय विचार, वैयावृत्त धार, समाधि संभार,
छोड़ तन ममता, नित किजै उत्तम ध्यान जो आवे समता।।
इच्छा की पवन थमावे, मन का जल अचल बनावे।
तब ज्ञान झलक दरसावे, निर्वाण तुरत पद पावे।।
जस लाभ ख्याति की आस, सकल को नाश,
करो तप वीरा, पंच इन्द्रियन को दण्ड सहो तन पीरा।
है यही मनुष गति सार, जगत उद्धार, लहै तप भार,
मुनी भवतारी, दशलक्षण धर्म विचार जीव संसारी।।

उत्तम त्याग

त्रस थावर हिंसा टार, ज्ञान उपकार दान विधि चार,
त्याग के माहीं, सो बिना मुनिव्रत पूरण सधते नाहीं।
औषध श्रुत अभय आहारा, जो चार प्रकार, दो पात्र विचार,
होय निस्तारा, सम्यग्दृष्टि श्रावक मुनि पुरुष या दारा।।
जिनमत निंदक नर-नारी, द्रोही कलुषित आचारी।
ये हैं कुपात्र दुखकारी, नहिं कहे दान अधिकारी।।
रथ गौ रजत जग बाज, देह तुल साज, तिय घर राज,
लोह कंचन को है व्युत्पात संक्रान्ति दान दुर्जन को।
बिन परख दया का दान, दु:खी पहिचान, सबै सम जान,
देत आगारी, दशलक्षण धर्म विचार जीव संसारी।।

उत्तम आकिंचन्य

चपला सम चपल निहार, लक्ष्मी संसार, है कुलटानार,
नहिं कहीं जमती यह छोड़े सुकुल भरतार नीव सों रमती।
है छाया-माया एक, पकड कर टेक, जो गये अनेक,
छाव सम ढलती, पर यह न किसी के साथ पैंडभर चलती।।
इससे जो लोग विसारे, वह जग में भ्रमते सारे।
जो इससे हुये किनारे, तज भवभ्रम मुक्त सिधारे।।
जीरण त्रण सम धन माल, छोड़ तत्काल, आस जग टाल,
चले गये वन को आकिंचन धर्म सम्भाल शुद्ध कर मन को।।
मुनि छोड़ जगत का वास त्याग सब आस गहे सन्यास,
मोक्ष अधिकारी, दशलक्षण धर्म विचार जीव संसारी।।

उत्तम ब्रह्मचर्य

लख तिया पुरुष सम तात् सुता-सुत मात, बहन अरु भ्रात,
जो नाता गिनते, सो नरनारी निज सुगति महल को चिनते।
हो उनका यश विख्यात, कलंक नश जात, पाप को घात,
लहे जग भूषण, हुआ सीता का उपसर्ग शील का दूषण।।
लख अग्नि कुण्ड में धाई, सीता ने टेर लगाई।
हो शील विषय चपलाई, तो देह अभी हो छाई।।
जब कूदी अग्नि मंझार, वो नई संभार अग्नि हुई वारि,
कमल खिल आये, रच रत्न सिंहासन पूजन को सुर थाये।
'मंगत' यह शील विचार, ब्रह्मचर्य सार मोक्ष दातार,
को ढोक हमारी, दशलक्षण धर्म विचार जीव संसारी।।
पोष बदी तिथि अष्टमी उगनिस सन पंथास।
जैनी वरणी धर्मदास, उर धर परम मुलास।।

निबन्ध आमंत्रित

दशलक्षण महापर्व के अवसर पर अ. भा. जैन युवा फैडरेशन शाखा-जबलपुर द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है, जिसका विषय **निश्चय शुद्धि के साथ व्यवहार शुद्धि का प्रेरक जैनधर्म** रखा गया है। प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर 1100/- रुपये, द्वितीय स्थान पर 700/-रुपये, तृतीय स्थान पर 500/-रुपये एवं पाँच प्रतियोगियों को सांत्वना पुरस्कार के रूप में 101/-रुपये की राशी के साथ स्मृति चिन्ह पुरस्कार स्वरूप दिया जायेगा। इच्छित प्रतियोगी दिनांक 20 सितम्बर, 2005 तक अपने निबन्ध सुस्पष्ट लिपि में कम से कम 1500 शब्दों में लिखकर निम्नांकित पते पर भेजें।

ह्व संयोजक, विराग शास्त्री
सर्वोदय-702, जैन टेलीकॉम, फूटाताल, जबलपुर (म.प्र.)

दशलक्षण महापर्व कहाँ-कौन

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी दशलक्षण महापर्व में समाज के आमंत्रण पर विद्वान भेजने की व्यवस्था की गई है। दिनांक 25 अगस्त, 2005 तक हमारे पास 523 स्थानों से आमंत्रण प्राप्त हो चुके हैं तथा अभी भी अनेक स्थानों से आमंत्रण प्राप्त हो रहे हैं। दिनांक 28 अगस्त तक लिये गये निर्णयानुसार 502 स्थानों पर ही विद्वान निश्चित किये जा सके हैं; जिसमें से 309 स्थानों की लिस्ट हम विगत अंक में प्रकाशित कर चुके थे, शेष स्थानों एवं परिवर्तन हुए विद्वानों के नाम यहाँ दिये जा रहे हैं। ध्यान रहे, इनमें 261 विद्वान तो श्री टोडरमल महाविद्यालय के ही हैं।

विदेश ह्न 1.**बैंकाक :** पण्डित रूपेशकुमारजी शास्त्री, चिचोली।

अन्य प्रान्त ह्न 1.**बेलगाँव :** पं. विक्रान्तजी शाह सोलापुर 2.**बेलगाँव :** पं.सुनीलजी बेलोकर सुलतानपुर 3.**सिकन्दराबाद :** पं.मनोजजी शास्त्री अभाना 4.**रानीपुर(हरिद्वार) :** पं.नितिनजी शास्त्री सूरत 5.**हिसार :** पं.महावीरजी मांगूलकर कारंजा 6. **गणौरमण्डी :** पं.कैलाशचन्दजी मोमासर 7.**पुरूलिया :** पं.सौरभजी शास्त्री फिरोजाबाद 8.**कोलकाता :** पं.सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़ 9.**कोलकाता :** पं.अशोकजी शास्त्री रायपुर 10.**भागलपुर :** पं. वीरेन्द्रजी शास्त्री बरां 11. **यमुनानगर :** पं.शाकुलजी जैन मेरठ 12.**हुबली :** पं.अभिजीतजी अलगौंडर।

गुजरात प्रान्त ह्न 1.**पोरबन्दर :** पं.आशीषजी शास्त्री विदिशा 2.**तलोद :** प्रवीणजी शास्त्री जयपुर 3.**अहमदाबाद (नवरंगपुरा) :** पं. बी.जी श्रीपालजी जयपुर 4.**अहमदाबाद (सुखरामनगर) :** पं.स्वतंत्रजी शास्त्री खरगापुर 5. **अहमदाबाद (ओढ़व) :** पं.अखिलेशजी शास्त्री बरां 6. **रखियाल :** पं.विपुलजी मोदी सागर 7.**जेतपुर :** पं.सचिन्द्रजी शास्त्री गढ़ाकोटा 8.**अहमदाबाद (मेघाणीनगर) :** पं.जितेन्द्रजी जैन मुम्बई 9.**सूरत :** पं.अरूणजी शास्त्री मौ 10.**सूरत :** पं.चैतन्यजी सातपुते गजपंथा 11.**सूरत :** पं.संतोषजी बोगार सोलापुर।

उत्तरप्रदेश प्रान्त ह्न 1.**कैराना :** पं.आश्विनजी नानावटी 2.**बानपुर :** पं. अनुजजी जैन जयपुर 3.**शिकोहाबाद :** पं.संजयजी शास्त्री बड़ामलहरा 4.**कासगंज :** पं.अनिलजी आलमान हेरले 5.**गंगेरू :** पं.अनुराजजी शास्त्री फिरोजाबाद 6. **मेरठ (शास्त्रीनगर) :** पं.संभवजी शास्त्री नैनधरां 7.**रानीपुर :** पं.अतुलजी जैन ललितपुर 8.**बरेली :** पं.आकाशजी शास्त्री छिन्दवाड़ा 9.**खेकडा :** ब्र. विमला बहनजी जयपुर 10.**खेकडा :** पं. सुमितजी शास्त्री टीकमगढ़ 11.**कानपुर (किदवई नगर) :** पं.अमितजी गुना 12.**डांडा इटावा :** पं.शांतिलालजी सोगानी 13. **एत्मादपुर :** पं.अभिनन्दनजी पाटील हेरले 14.**सरहानपुर :** पं.अरूणजी मोदी सागर 15.**गुरसराय :** पं.अमितजी जैन बीना 16. **सरहानपुर :** पं.अरविन्दजी अमरकोट।

महाराष्ट्र प्रान्त ह्न 1.**मुम्बई (भायन्दर-वेस्ट) :** पं.धर्मेन्द्रजी जैन जयपुर 2.**चिखली :** पं. एलमचन्दजी शास्त्री गड़खेडा 3.**मुम्बई (भायन्दर-पूर्व) :** पं. नंदकिशोरजी मांगूलकर काटोल 4.**कोल्हापुर :** पं.कमलेशकुमारजी मौ 5.**पंढरपुर :** पं.अविनाशजी पाटील शेडबाल 6. **अक्कलकोट :** पं.दिग्विजयजी आलमान 7.**फालेगाँव :** पं.रमेशजी शिरहट्टी 8.**मालशिरस :** पं.शीतलजी आलमान हेरले 9.**डोणगाँव :** पं. दिलीपजी महाजन 10.**मालेगाँव :** पं. ऋषभजी शास्त्री अहमदाबाद 11.**वसमतनगर (चन्द्रप्रभ) :** पं.अंचलप्रकाश जैन ललितपुर 12.**सावदा :** पं.विजयजी बोरालकर आजेगाँव 13.**धरणगाँव :** पं.सौरभजी शास्त्री शाहगढ़ 14.**हेरले :** पं.अनिलजी बेलोकर सुलतानुपर 15.**हुपरी :** पं.रोहनजी रोटे कोल्हापुर 16. **डासाला :** पं.सतीशजी बोरालकर डोणगाँव 17. **पुणे (चिंचवड़) :** पं. जितेन्द्रजी चौगुले भिलवडी 18.**मुम्बई (भूलेश्वर) :** पं. निखिलजी शास्त्री कोतमा 19. **नागपुर (इत.):** पं.अभिनयजी शास्त्री जबलपुर 20.**हिंगोली :** पं. दीपकजी डांगे 21.**वैराग :** पं. उमेशजी घोसरवाडे अकिवाट 22.**मुलावा :** पं. मुकुन्दजी ढोके वसमतनगर 23. **सेनगाँव :** पं. प्रशान्तजी उखलकर गोवर्धन 24. **फलटन :** पं. संतोषजी सावजी अम्बड 25. **बेलोरा :** पं.धवलजी गांधी नातेपुते 26. **पानकन्हेरगाँव :** पं.परागजी महाजन कारंजा 27. **वरूड :** पं. प्रवीणजी पाटील हेरले 28. **हिवरखेड :** पं.अभिजीतजी पाटील वसगडे 29. **मोताला :** पं. रवीन्द्रजी महाजन बीड 30. **मोहोल :** पं. किशारेजी धोंगडे रहाटगाँव 31. **सदाशिवनगर :** पं. किर्तीजी पाटील वसगडे 32. **बोरी :** पं. आदेशजी बोरालकर शेणगाँव 33. **साखरा :** पं.मिलीन्दजी केटकाले 34.**वसगडे :** पं. प्रसन्नजी शेटे कोल्हापुर 35. **खामगाँव :** पं.चन्दनमलजी शाह नातेपुते।

राजस्थान प्रान्त ह्न 1.**बून्दी (महावीर मन्दिर) :** पं.भंवरलालजी जैन कोटा 2.**उदयपुर (मु. मण्डल) :** पं.जिनेन्द्रजी शास्त्री उदयपुर 3.**उदयपुर (से. 11) :** पं.आदित्यजी शास्त्री खुरई 4.**चितौडगढ़ :** पं.प्रवेशजी भारिल्ल करेली 5.**डबोक :** पं.प्रक्षालजी शास्त्री उदयपुर 6. **बांसवाड़ा :** पं.संजयजी शास्त्री खनियांधाना 7.**कुरावड :** पं.विकासजी शास्त्री बानपुर 8.**जौलाना :** पं.ब्रजकुमारजी जौलाना 9.**बून्दी (नैनवाँ रोड) :** पं.विमलचन्दजी जैन लाखेरी 10.**जयथल :** पं. जिनेन्द्रजी नन्देश्वर 11.**झालावाड :** पं.ज्ञानचन्दजी जैन 12.**देवली :** पं.विवेकजी सागर 13.**लकडवास :** पं.राजेशजी शास्त्री शिवपुरी 14.**टोकर :** पं.विकासजी शास्त्री खनियांधाना 15.**लाम्बाखोह :** पं.प्रीतेशजी शास्त्री बांसवाडा 16. **कुआँ :** पं.पद्मचन्दजी जैन पथरिया 17.**कानौड :** पं. दीपेशजी शास्त्री बांसवाड़ा 18.**डूँगरपुर :** पं.विमोशजी शास्त्री खडैरी 19. **बीकानेर:** पं.कमलेशजी शास्त्री बण्डा 20.**पीसांगन :** पं.सन्मतिजी शास्त्री पिडावा 21.**इटावा :** पं.दीपकजी शास्त्री जबेरा 22.**वल्लभनगर :** पं.संजयजी शास्त्री अरथूणा 23. **कुशलगढ़ (शांतिनाथ) :** पं.सौरभजी शास्त्री गढ़ाकोटा 24. **झालीनीजी का बराना :** पं. अरहंतवीरजी शास्त्री फिरोजाबाद 25. **कूँण :** पं.मंयकजी शास्त्री बांसवाड़ा 26. **लाखेरी :** पं.अनन्तराजजी शास्त्री मण्ड्या 27. **सरदारशहर :** पं.वीरचन्दजी जैन लांडनू 28. **नौगावाँ :** पं.निपुणजी शास्त्री टीकमगढ़ 29. **वैर :** पं. सोनलजी जैन जबेरा 30. **झालरापाटन :** पं.राहुलजी शास्त्री अलवर 31. **कुचामन सिटी :** पं.संदीपजी शास्त्री बिनौता 32. **थानागाजी :** पं.प्रमेशजी शास्त्री जबेरा 33. **पीठ :** पं.सचिनजी भरडा 34. **लूणदा :** पं. धीरजजी शास्त्री जबेरा 35. **बोहेडा :** पं.विनयजी जैन बून्दी 36. **साकरोदा :** पं.सत्येन्द्रजी मिरकुटे 37. **कुचामनसिटी :** पं.राजेशजी शास्त्री गुढा 38. **बडोदामेव :** पं.आशीषजी शास्त्री मौ 39. **प्रतापगढ़ :** पं.नितिनजी जैन सेमारी।

मध्यप्रदेश प्रान्त ह्न 1.**इन्दौर(न्यू पलासिया):** डॉ. कपूरचन्दजी कौशल भोपाल 2.**इन्दौर(शक्करबाजार) :**पं.मधुकरजी जैन जलगाँव 3.**इन्दौर (माणक चौक) :** पं.सुबोधजी सिंघई सिवनी 4.**इन्दौर (गांधीनगर) :** पं.दीपेशजी शास्त्री गुढा 5.**भोपाल (चौक) :** पं.अनुभवजी शास्त्री कानपुर 6. **बेगमगंज :** पं.सुरेन्द्रजी पंकज छिन्दवाड़ा 7.**दुर्ग :** पं.संजयजी सेठी जयपुर 8.**करेली :** पं.सतीशचन्दजी जैन पिपरई 9.**सिवनी :** पं.सरदारमलजी बेरसिया 10.**रतलाम (स्टेशन) :** पं.सुदीपजी शास्त्री घाटोल 11.**गोरमी :** पं.निरजजी शास्त्री भिण्ड 12.**शाहगढ़ :** पं.अशोकजी जैन उज्जैन 13.**टीकमगढ़ :** पं.पूनमचन्दजी छाबड़ा जयपुर 14. **गौरझामर :** पं.पुष्पेन्द्रजी जैन बानपुर 15.**बंडाबेलई :** पं.पद्मचन्दजी जैन कोटा16. **गढ़ाकोटा :** पं.राजेन्द्रजी जैन पिपरई 17.**गोहद :** पं. नरेन्द्रजी जबलपुर 18. **लुहारदा :** पं.बाबूलालजी पल्लिवाल गुना 19. **विजयपुर :** पं.रवीकुमारजी जैन ललितपुर 20.**सागर (गौरमूर्ति) :** पं.प्रयंकजी शास्त्री रहली 21.**बीड :** पं. निलेशजी छिन्दवाड़ा 22.**विन्ध्यनगर :** पं.चैतन्यजी शास्त्री कोटा 23. **जावरा :** पं.पद्मचन्दजी गंगवाल इन्दौर 24.**बाबई :** पं. श्रेंयासजी शास्त्री जबलपुर 25.**कर्रापुर :** पं.अरूणजी लालोनी अशोकनगर 26. **कुचडौद :** पं.विमलजी जैन जलेसर 27. **नरवर :** पं.सचिनजी जबेरा 28.**मगरौनी :** पं.सुदीपजी कान्हेड देवलगाँवसाकरशा 29. **धरमपुरी :** पं. कैलाशचन्दजी इन्दौर 30. **अमायन :** पं.चन्दुलालजी कुशलगढ़ 31. **बाकल :** पं.आकेशजी जैन छिन्दवाड़ा 32. **इटारसी :** पं.चित्तरंजनजी जैन छिन्दवाड़ा 33. **कोलारस :** पं.अभिनन्दनजी खनियांधाना 34. **पचमढ़ी :** पं. मोतीलालजी करेली 35.**इन्दौर (रामचन्द्र) :** पं.सतीशजी कासलीवाल महिदपुर 36. **रहली :** पं.नयनजी शाह हैद्राबाद 37. **खडैरी :** पं.संजीवजी शास्त्री 38. **इन्दौर (लश्करी मन्दिर) :** पं.गुलाबचन्दजी बीना 39. **इन्दौर (जावरा मन्दिर) :** पं. मनीषजी पिडावा 40. **बावनगजा :** पं.विवेकजी शास्त्री पिडावा 41. **शिवपुरी (छत्री मन्दिर) :** पं.सुनीलजी शास्त्री रामगढ़42.**बावडीखेडा :** पं.दीपकजी अथणे अरग 43. **शहपुरा :** पं.अंकितजी शास्त्री खनियांधाना 44. **मण्डलेश्वर :**पं.पंकजजी शास्त्री खडैरी 45. **अम्बाह :** पं.अभयजी शास्त्री खडैरी 46. **अकाझिरी :** पं.संतोषजी जैन बक्स्वाहा 47. **राधौगढ़ :** पं.अशोकजी मांगूलकर 48. **दुर्ग :** पं.विजयजी मोडी 49. **बनखेडी :** पं.अर्पितजी जैन। **(शेष पृष्ठ-8 पर ...)**

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार

35

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ....)

प्रवचनसार में ४७ नयों के प्रकरण में सप्तभंगी की चर्चा की गई है। उसमें अवक्तव्य की चर्चा करते हुए कहा है कि आत्मा में एक अवक्तव्य नामक धर्म है और उस धर्म को जो नय विषय बनाता है, वह अवक्तव्यनय है। आत्मा में एक अस्ति नामक धर्म है, जिसे अस्तिनय विषय बनाता है। आत्मा में नास्ति नामक धर्म है, जिसे नास्तिनय विषय बनाता है।

अब, आचार्य पाँचवें बोल की चर्चा करते हैं, जो स्वरूप से सत् और स्वरूप-पररूप से युगपत् अवक्तव्य है; इसप्रकार अस्ति अवक्तव्य है। इसमें सत् और अवक्तव्य दोनों अपेक्षाएँ लगाई हैं।

स्वरूप से सत् तथा स्वरूप और पररूप से युगपत् बोलना असंभव है; इसलिए उसे अस्ति अवक्तव्य कहा गया है। ऐसा नहीं है कि अस्ति कहना संभव नहीं है; इसलिए अस्ति अवक्तव्य भंग है; अपितु जिसप्रकार सत् और असत् का मिला हुआ अस्ति-नास्ति भंग है ह्न ऐसे ही सत् अर्थात् अस्ति और अवक्तव्य का यह मिश्रित भंग है। जिसप्रकार अस्ति अवक्तव्य है ह्न यह मिला हुआ भंग है; उसीप्रकार असत् और अवक्तव्य का मिला हुआ नास्ति अवक्तव्य भंग है और सत्, असत् तथा अवक्तव्य से मिला हुआ अस्ति नास्ति अवक्तव्य भंग है।

अस्ति-नास्ति, एक-अनेक, भिन्न-अभिन्न, नित्य-अनित्य आदि धर्मयुगलों में सप्तभंगी का प्रयोग होता है।

गाथा ११६ की इन मार्मिक पंक्तियों को देखते हैं ह्न

'अब, जिसका निर्धार करना है, इसलिए जिसे उदाहरणरूप बनाया गया है ह्न ऐसे जीव की मनुष्यादि पर्यायें क्रिया का फल हैं; इसलिए उनका अन्यत्व (अर्थात् वे पर्यायें बदलती रहती हैं इसप्रकार) प्रकाशित करते हैं।'

इसमें आचार्य यह मर्म की बात बता रहे हैं कि असमानजातीय द्रव्यपर्याय को इसमें उदाहरण बनाया है, उसी पर वजन दिया है। इसमें 'देव, तिर्यंच, नारकी ये मैं नहीं हूँ' ह्न यह कहा है। केवलज्ञान, सम्यग्दर्शन आदि को इसलिए नहीं लिया; क्योंकि सर्वप्रथम यह निश्चित करना अनिवार्य है कि 'मैं मनुष्य हूँ या नहीं।' हमारी ९९% समस्याएँ देहादिक में एकत्वबुद्धि की ही हैं; क्योंकि 'मैं पंडित हूँ' 'मैं हुकमचन्द हूँ' 'मैं मनुष्य हूँ' 'मैं जैनी हूँ।' ह्न ऐसी मान्यता हमारी समस्या है। सम्पूर्ण हिन्दुस्तान में 'मैं सम्यग्दर्शन हूँ' 'मैं केवलज्ञान हूँ' ह्न ऐसा माननेवाले कितने मिलेंगे?

सब लोग इसप्रकार तो कहते हैं कि मैं केवलज्ञानस्वभावी हूँ; लेकिन कोई ऐसा नहीं कहता कि 'मैं केवलज्ञान हूँ।' जब मैं केवलज्ञानस्वभावी हूँ ह्न ऐसा कहते हैं, तब उसमें केवल का अर्थ 'मैं रागस्वभावी नहीं हूँ, जड़स्वभावी नहीं हूँ' - यह है। यहाँ केवल से तात्पर्य केवलज्ञान से नहीं है। यहाँ राग का निषेध है। राग मेरा विभाव है, स्वभाव नहीं; इसलिए मैं केवल ज्ञानस्वभावी हूँ।

शास्त्र में ऐसे उल्लेख बहुत मिलेंगे कि 'नाहं देहो'; परंतु ऐसे कम ही उल्लेख मिलते हैं कि 'नाहं केवलज्ञानं' 'नाहं सम्यग्दर्शनं'। यहाँ हम यह नहीं कहना चाहते हैं कि तुम सम्यग्दर्शन से अहंबुद्धि करो; परंतु यह कहते हैं कि त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा में अहंबुद्धि करने का नाम ही सम्यग्दर्शन है। यदि 'मैं' सम्यग्दर्शन होता तो सम्यग्दर्शन को अनादि से होना चाहिए था; क्योंकि मैं अनादि से हूँ।

आचार्य कहते हैं कि यह शत-प्रतिशत सत्य है कि 'सम्यग्दर्शन मैं नहीं हूँ'; पर यह मुख्य समस्या नहीं है। समस्या तो देहादिक में एकत्वबुद्धि की है, जिसका निर्धार करना है; इसीलिए जिसे उदाहरणस्वरूप बनाया गया है। जीव की मनुष्यादिपर्यायें क्रिया का फल है। क्रिया का फल अर्थात् इस भगवान आत्मा ने स्वयं की आराधना नहीं की; इसलिए यह समस्या उत्पन्न हुई है।

प्रश्न यह है कि कभी मनुष्य, कभी देव, कभी नारकी ह्न ऐसा फर्क और मनुष्य में भी कभी बालक, कभी जवानी, कभी बुढ़ापा, कभी बीमार, कभी स्वस्थ ह्न ऐसा फर्क क्यों दिखता है?

इसका उत्तर आचार्य देते हैं कि जीव की मोहसहित क्रिया एक-सी नहीं होती है, राग-द्वेष एकसा नहीं होता, मिथ्यात्व भी एकसा नहीं होता; इनमें निरन्तर उतार-चढाव ह्न तारतम्य बना रहता है। किसी से राग-द्वेष होता है; उसमें भी तारतम्यता बनी रहती है; परन्तु वीतरागी क्रिया तो अनन्तकाल तक एक सी होती है, इसलिये सिद्धपर्याय तो अनन्तकाल तक एकसी रहती है; क्योंकि वीतरागी क्रिया का फल सिद्धपर्याय है।

जो मनुष्यादि पर्यायों में विविधता देखी जाती है; वह इसके भावों की विविधता का परिणाम है; मोह की क्रिया की विविधता का परिणाम है। इस जीव को मोह की क्रिया की विविधता के कारण ही विविध संयोगों की प्राप्ति होती है। कई लोग ऐसा प्रश्न करते हैं कि भाईसाहब बाढ़ आई और इतने सारे लोग एकसाथ मारे गए; क्या इतने लोगों ने एकसाथ ऐसा पाप किया होगा ? एकसा ही पाप उनके उदय में आया था क्या ?

उनसे कहते हैं कि ऐसा भी हो सकता है, इसमें कौन-सी गजब की बात है ? हमारे भाव भी एक से हो सकते हैं। अमरीकी राष्ट्रपति ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति को फटकार सुनाई तो सभी हिन्दुस्तानी एकसाथ खुश होते हैं; उससे होनेवाला पापबंध भी सभी को एक-सा ही होगा।

हमें तो हमारे जीवन में एकाधबार ही ऐसा देखने को मिलता है कि बाढ़ आ गई और लाखों मर गए; लेकिन हमें पता नहीं है कि हम प्रतिदिन ऐसी बाढ़ ला रहे हैं। हम ऊपर मुँह करके पेशाब करने बैठ जाते हैं एवं नीचे हजारों चींटियाँ हैं; उनके लिए तो यह गंगाजी में बाढ़ ही आ गई है। स्थान-स्थान पर लाखों जीव एकसाथ मरते हुए देखे जा सकते हैं। जो आलू और जमीकंद खाते हैं, वे उसे चाय जैसा उबालते हैं; उसमें लाखों जीव एकसाथ उबलते हैं, मरते हैं।

यहाँ आप मात्र कभी-कभार की घटनाओं के संदर्भ में सोच रहे हैं; लेकिन ऐसी घटनाएँ प्रतिदिन हो रही हैं। प्रतिदिन लाखों जीवों के एक से भाव हो रहे हैं। एक से भावों के कारण एकरूपता और अलग-अलग प्रकार के भावों के कारण भिन्नता दिखाई देती है। मनुष्यादि पर्यायों में जहाँ एकरूपता नहीं है, वहाँ निरंतर पृथक्-पृथक् परिवर्तन देखने में आता है। ह्न ऐसी ये जो पर्यायें हैं, ये इसकी क्रिया का ही फल हैं।

वस्तुत: कर्म पुद्गल ही है; परंतु उस कर्म के उदय से हम में जो मोह-राग-द्वेष भाव होते हैं; उन्हें भावकर्म कहा जाता है। इसमें ऐसा नहीं है कि

इस जीव ने राग-द्वेष किये थे ह्न ये भी इसका कार्य है और कर्म भी इसका कार्य है। आचार्य यहाँ राग का कर्त्ता भगवान आत्मा को बताकर कर्मचेतना, कर्मफलचेतना आदि का विश्लेषण करेंगे। पुद्गल कर्म के कार्यभूत ये मनुष्यादि पर्यायें हैं अर्थात् ये मनुष्यादि पर्यायें नोकर्म हैं।

इसप्रकार मनुष्यादि पर्यायें जो मिली हैं, वे ज्ञानावरणादि कर्म के उदय में मिली हैं। इन मुनष्यादि गति में जाना इस जीव की क्रिया का फल है।

इससे आशय यही है कि इस जीव को किसी ने नरक नहीं भेजा, इसे कोई स्वर्ग नहीं भेजेगा। स्वयं के कर्मानुसार ही यह नरक या स्वर्ग में जाता है। इसप्रकार प्रत्यक्ष और परोक्षरूप से आचार्य इसका कर्त्ता जीव को कह रहे हैं। इसप्रकार यहाँ आचार्य ने सद्भूतव्यवहारनय की अपेक्षा लगा दी है।

सर्वप्रथम सद्भूतव्यवहारनय से इस जीव को राग का कर्त्ता कहा। फिर मनुष्यादि पर्यायें तेरी हैं, इस जीव के कर्म का फल है ह्न ऐसा कहकर असद्भूतव्यवहारनय से इसे द्रव्यकर्म का कर्त्ता घोषित कर दिया।

यहाँ यदि मनुष्य शरीर को लिया जायेगा तो यहाँ अनुपचरित-असद्भूत व्यवहारनय की अपेक्षा लगेगी एवं स्त्री-पुत्र-मकान आदि को लिया जाएगा तो उपचरित-असद्भूतव्यवहारनय की अपेक्षा लगेगी।

जो भी पर्यायें पैदा हुई हैं, वे कर्म के स्वभाव के द्वारा जीव के स्वभाव के पराभव के कारण ही पैदा हुई हैं। इसे आचार्य ने दीपक के उदाहरण से समझाया है।

दीपक अर्थात् लौ। दीपक सकोरे का नाम नहीं है, तेल अथवा बाती का नाम नहीं है; वास्तविक दीपक तो लौ ही है। उस लौ के कारण ही उस सम्पूर्ण परिकर को दीपक कहा जाता है। उस दीपक ने जो उजाला करने का काम किया है; उसमें उसने स्वयं ने कुछ भी नहीं किया है। उसने तेल की सत्ता का नाश करके, तेल के स्वभाव का पराभव करके उजाला किया है।

ऐसे ही कर्म ने इस जीव को जो मनुष्यादि पर्यायें दी हैं; वह आत्मा के स्वभाव का पराभव करके दी हैं। आत्मा का सत्यानाश करके इसे मनुष्यादि पर्यायें मिली हैं।

कई व्यक्ति कर्म को कर्मदेवता मानते हैं और कहते हैं कि भाई ! कर्म ने हमें यह पर्याय दी है।

किसी को एक लाख रुपए की जरूरत थी और किसी ने उसे एक लाख रुपए दिये। तो लेनेवाला उनका उपकार मानता है; परंतु यहाँ उपकार कैसा ? क्योंकि इस जीव के पुण्य के उदय के बिना कोई उसे एक पैसा भी नहीं दे सकता। इसमें उसका एक लाख रुपये प्राप्त करने का पुण्य खर्च हो गया है।

आत्मा के स्वभाव का पराभव करके इस जीव को मनुष्यादि पर्यायें कर्म के निमित्त से प्राप्त हुई हैं। पराभव से आचार्य का क्या आशय है - इसे ११८वीं गाथा की टीका के माध्यम से समझाते हैं ह्न

'जिसप्रकार कनकबद्ध (सुवर्ण में जड़े हुए) माणिक के कंगनों में माणिक के स्वभाव का पराभव नहीं होता; उसीप्रकार ये मनुष्यादिपर्यायें नामकर्म से निष्पन्न हैं; किन्तु इतने से भी वहाँ जीव के स्वभाव का पराभव नहीं है। वहाँ जीव जो स्वभाव को उपलब्ध नहीं करता, अनुभव नहीं करता; सो पानी के पूर (बाढ़) की भाँति स्वकर्मरूप परिणमित होने से है, जैसे पानी का पूर प्रदेश से और स्वाद से निम्बचन्दनादिवन-नराजिरूप (नीम, चन्दन इत्यादि वृक्षों की लम्बी पंक्तिरूप) परिणमित होता हुआ अपने द्रवत्व और स्वादुत्वरूप स्वभाव को उपलब्ध नहीं करता; उसीप्रकार आत्मा भी प्रदेश से और भाव से स्वकर्मरूप परिणमित होने से (अपने) अमूर्तत्व और निरूपराग विशुद्धिमत्वरूप स्वभाव को उपलब्ध नहीं करता।'

यहाँ आचार्य ने 'माणिक की भाँति' एवं 'पानी के पूर की भाँति' ह्न इसप्रकार दो उदाहरण दिए।

माणिक को सोने में जड़ दो तो माणिक का पराभव नहीं होता है। सोना भी दिखता रहता है और माणिक भी दिखता रहता है। इसीप्रकार मनुष्यपर्याय में भगवान आत्मा मानो सोने में माणिक जड़ दिया है; उसमें मनुष्य पर्याय और भगवान आत्मा दोनों पृथक्-पृथक् चमक रहे हैं। जिसप्रकार सोने में जड़ने से माणिक का पराभव नहीं होता है; उसी प्रकार भगवान आत्मा का मनुष्यादि पर्यायों में रहने से पराभव नहीं होता।

यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होता है कि पराभव का कारण क्या है ?

यहाँ आचार्यदेव ने पानी के पूर का उदाहरण दिया है। हिमालय से निकला हुआ पानी निर्मल होता है; परंतु वह बहते-बहते जंगल में बहुत सारे नीम, चंदनादि पेड़ों से गुजरता है। वह चंदन के वन में से निकलता है तो सुगंधित हो जाता है, वह नीम के वृक्षों से निकलता है तो कड़वा हो जाता है। इसमें उस पानी की मूल गंध नहीं रहती और न ही उसका मूल स्वभाव रहता है। इसप्रकार उस पानी का पराभव हुआ; क्योंकि उसका मूलस्वभाव तिरोहित हो गया है।

इसीप्रकार इस आत्मा का पराभव इस मनुष्य पर्याय में जुड़ जाने से है। यह आत्मा मोह-राग-द्वेषभावों में से निकला है; इसलिए इसका पराभव हुआ है। आचार्य ने यहाँ संयोग पर अपराध नहीं मड़ा है।

आचार्य यहाँ कह रहे हैं कि पानी नीम में चढ़ा हुआ है अर्थात् नीम में भी पानीपन है, गीलापन है। उसमें से हम नीम की पत्तियों का रस निकालें, चन्दन का रस निकालें - इसमें उसने तीन चीजें खोई हैं।

पानी ने अपना स्वाद खोया है, अपनी गंध एवं प्रवाही स्वभाव खोया है; क्योंकि वह वृक्ष में गया एवं उसी में रम गया। पानी का जो बहना स्वभाव था, वह बंद हो गया; जितना पानी उन वृक्षों ने सोख लिया, उस पानी का प्रवाही स्वभाव खतम हो गया।

उसीप्रकार आत्मा भी प्रदेश से और भाव से स्वकर्मरूप परिणमित होने से अमूर्तत्व से मूर्तत्व हो गया; तब वह अमूर्तत्व, निरूपराग विशुद्धिमत्वरूप स्वभाव को उपलब्ध नहीं करता। यही इस जीव की समस्या का महत्त्वपूर्ण कारण है।

इसप्रकार यह सिद्ध हुआ कि आत्मस्वभाव के पराभव का कारण शरीरादि का संयोग नहीं है; अपितु शरीरादि संयोगों में आत्मा का अपनापन है, उन्हें अपना जानना-मानना है, उन्हीं से जुड़ जाना है, उन्हीं में रम जाना है।

यह प्रवचनसार की अनूठी शैली है; जिसमें आचार्यदेव ने प्रथम इस जीव को भावकर्म का कर्त्ता, फिर द्रव्यकर्म का कर्त्ता एवं तत्पश्चात् शरीरादिक का कर्त्ता सिद्ध किया; क्योंकि यदि सबका ही अकर्त्ता है तो यह संसार ही नहीं होना चाहिए था। ऐसे अकर्त्ताभाव को तो सांख्यमत स्वीकार करता है।

समयसार में प्रश्नोत्तर की शैली में जयसेनाचार्य ने यह सिद्ध किया कि यह आत्मा पर को जानता ही नहीं है ह्न ऐसी मान्यता तो बौद्धों की है। ●

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

(पृष्ठ-3 का शेष ....)

निकटतम कारण-कार्य सम्बन्ध है; परन्तु परद्रव्यों के साथ मात्र निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, कर्ता-कर्म सम्बन्ध नहीं। अत: पर में कुछ भी परिवर्तन नहीं करना है।

ऐसी यथार्थ श्रद्धा से हम निश्चिंत एवं पर के कर्तृत्व के भार से निर्भार हो जाते हैं और हमारा उपयोग सहज में ही दन्द-फन्द से हटकर अन्तर्मुख होने लगता है। इस उपयोग की अंतर्मुख होने की प्रक्रिया को ही ध्यान कहते हैं। धीरे-धीरे उपयोग की अन्तर्मुखता का अर्थात् ध्यान का समय बढ़ता जाता है और एक समय यह आ जाता है कि लगातार अन्तर्मुहूर्त तक उपयोग स्वरूप में स्थिर होने पर केवलज्ञान प्रगट होकर यह आत्मा स्वयं परमात्मा बन जाता है।' वस्तुव्यवस्था के इस नियम को ही क्रमबद्धपर्याय कहते हैं। इसी क्रमबद्धपर्याय से वस्तुस्वातंत्र्य के सिद्धान्त की सिद्धि हो जाती है। क्रमबद्धपर्याय का मूल आधार सर्वज्ञता है और सर्वज्ञता की स्वीकृति के बिना तो भगवान का अस्तित्व ही नहीं टिकता।

अम्मा ने इस गंभीर और सारभूत प्रवचन को सुना तो बहुत ध्यान से; परन्तु रेगिस्तान की बरसात की भाँति उसकी भावभूमि फिर भी प्यासी रह गई। आज का समय समाप्त हो गया, अत: शेष बात कल पर छोड़नी पड़ी। ●

(पृष्ठ-5 का शेष ....)

जयपुर ह्न 1-2.**टोडरमल स्मारक भवन :** पं. रतनचन्दजी भारिल्ल एवं पं. शांतिजी पाटील 3.**आदर्शनगर :** पं.दिलीपजी बाकलीवाल इन्दौर 4. **मानसरोवर :**डॉ.नरेन्द्रजी जैन 5.**महावीरनगर :** पं.रमेशचन्दजी लवाणवाले, 6-30. पं. विनयचन्दजी पापडीवाल, पं. संतोषजी झांझरी, पं. गंभीरमलजी सोनी, पं. चिरंजीलालजी जैन, डॉ. प्रभाकरजी सेठी, पण्डित कैलाशचन्दजी मल्लैया, डॉ. अल्काजी सेठी, विदुषी प्रभाजी जैन, विदुषी प्रेमलताजी जैन, पं. ताराचन्दजी सोगानी, पं.राजेशजी शास्त्री शाहगढ़, पं. संजयजी शास्त्री बड़ामलहरा, पं. शिखरचन्दजी शास्त्री बड़ागाँव, डॉ. भागचन्दजी जैन, पं. मनीषजी कहान खडैरी, पं. परेशजी शास्त्री घाटोल, पं. जितेन्द्रजी राठी जयपुर, पं. चिन्मयजी शास्त्री पिड़ावा, पं. पीयूषजी शास्त्री, पं. अनंतवीरजी शास्त्री फिरोजाबाद, पं. सुनीलजी शास्त्री शाहगढ़, पं. देवेन्द्रजी शास्त्री अकाझिरी, पं. अजीतजी शास्त्री मौ, पं. श्रीमंतजी नेज, श्री पंकजजी जैन आदि विद्वानों द्वारा विभिन्न स्थानों पर पर्व में प्रवचनादि के माध्यम से धर्मलाभ मिलेगा।

सिद्धचक्र महामण्डल विधान सम्पन्न

ग्वालियर (म.प्र.) : यहाँ तेरहपंथी धर्मशाला, नई सड़क में 10 से 17 अगस्त तक श्री सिद्धचक्र विधान का आयोजन श्री दि. जैन जय जिनेन्द्र प्रेरणा मण्डल एवं श्री दि.जैन मुमुक्षु मण्डल ग्वालियर के संयुक्त तत्त्वावधान में हुआ।

इस अवसर पर ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी जैन आगरा एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ मिला। विधि-विधान के समस्त कार्य ब्र.अभिनन्दनकुमारजी खनियांधाना के निर्देशन में पण्डित महेन्द्रजी शास्त्री इन्दौर एवं पण्डित अभिनयजी शास्त्री जबलपुर ने सम्पन्न कराये। **ह्न शीतलप्रसाद जैन**

आवश्यकता

1. एक प्रौढ़ विद्वान की आवश्यकता है, जो प्रवचन एवं पाठशाला के कार्य को भली प्रकार संभाल सके। निर्वृत्त भावनावाले विद्वान को प्रमुखता रहेगी। आवास एवं भोजन की नि:शुल्क व्यवस्था। वेतन योग्यतानुसार दिया जायेगा।

2. जो कोई भी साधर्मी भाई निवृत्ति के साथ धर्माराधना की भावना रखते हैं, वे भी निम्न पते पर सम्पर्क करें। **ह्न महेन्द्रकुमार शास्त्री,**

मंत्री, श्री दिग. जैन महावीर परमागम मंदिर,
लश्कर रोड, भिण्ड (म.प्र.) फोन : (07534) 233750

वैराग्य समाचार

1. जबलपुर निवासी पण्डित ज्ञानचन्दजी जैन के 24 जुलाई को देहावसान पर देश की अनेक संस्थाओं ने शोक व्यक्त करते हुये उनके शीघ्र अभ्युदय की कामना की है। हम जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से हार्दिक संवेदना व्यक्त करते हैं। आपकी स्मृति में 201/- रुपये प्राप्त हुये हैं।

2. गुना निवासी श्रीमती पार्वतीदेवी ध.प. श्री मथुराप्रसाद मड़वरिया का दिनांक 14 जुलाई, 05 को जाग्रत अवस्था में णमोकार मंत्र का स्मरण करते हुये देहावसान हो गया है। आप आध्यात्मिक रुचिवाली अत्यन्त सरल गृहणी थीं। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान को कुल 201/- रुपये प्राप्त हुये हैं।

3. गोहाटी (आसाम) निवासी श्री भंवरीलालजी सरावगी (गंगवाल) का विगत माह में देहावसान हो गया है। आप धार्मिक प्रवृत्ति के थे तथा कवि के रूप में पहिचाने जाते थे। आपके निधन से गोहाटी जैन समाज को अपूरणीय क्षति हुई है। आपकी स्मृति में आपकी धर्मपत्नी श्रीमती मणीप्रभाजी की ओर से कुल 701/- रुपये प्राप्त हुये हैं।

4. श्री बाबूलालजी इन्जिनीयर कोटावालों की स्मृति में श्रीमती विद्याजी जैन की ओर से 300/- रुपये प्राप्त हुये हैं।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों - यही कामना है।

श्रीमती राजकुमारी महावीरप्रसादजी सरावगी, कोलकाता द्वारा जैनपथप्रदर्शक को 300/- रुपये प्रदान किये गये; एतदर्थ धन्यवाद !

ध्यान दें !

साधना चैनल पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन प्रतिदिन रात्रि 10.20 से 10.40 बजे तक प्रसारित हो रहे हैं। प्रवचन के प्रसारण में किसी वजह से 5-10 मिनिट की देर भी हो सकती है।

यदि निर्धारित समय से 10 मिनिट बाद तक भी प्रवचन प्रारंभ नहीं हो तो श्री पीयूषकुमारजी शास्त्री से 094140 79772 या (0141) 2705581 नं. पर सम्पर्क करें।

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) सितम्बर (प्रथम) 2005
J. P. C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा**,डबल एम.ए. जैनविद्या व धर्मदर्शन तथा इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** शास्त्री
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127